पूज्य
गुरुदेवश्री
जन्म जयंती
विशेषांक

वार्षिक सदस्यता शुल्क - रु. २५/-

April 2025

स्वानुभूतिप्रकाश

प्रकाशक :
श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट
भावनगर - ३६४ ००१.

पूज्य गुरुदेवश्रीकी १३६वीं मंगल जन्मजयंतीके अवसर पर उन्हें कोटि कोटि वंदन

पूज्य गुरुदेवश्री की वाणी तो तीर्थंकर भगवान की दिव्यध्वनि जैसी महामंगलकारी, आनंद उपजानेवाली थी। ऐसी वाणी का श्रवण जिनको हुआ वे सब भाग्यशाली हैं। पूज्य गुरुदेवश्री की वाणी और पूज्य गुरुदेवश्री तो इस काल के एक अचंभा थे। – पूज्य बहिनश्री

आपके आशीर्वाद से पूर्ण आनंदमयी निधि को प्राप्त हो जाऊँ और अनंत पदार्थों के तीनकाल के अनंते भाव वर्तमान एक–एक भाव से अविच्छिन्न प्रत्यक्ष होते रहें – ऐसी तीव्र अभिलाषा है।

– पूज्य सोगानीजी

गुरुदेव तो स्वयं एक अलौकिक द्रव्य थे, अलौकिक उनका परिणमन था और पुण्यका, वाणीका योग भी कोई अलौकिक सातिशय योग था। – पूज्य भाईश्री

स्वानुभूतिप्रकाश

वीर संवत्–२५५१, अंक–३२८, वर्ष–२७, अप्रैल–२०२५

कहानरत्न किरणें!!

–अध्यात्म युगसृष्टा
पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी
('परमागमसार'में से साभार उद्धृत)

चारित्र सो धर्म और उसका मूल सम्यग्दर्शन तथा उसका फल केवलज्ञान, दूसरी ओर कहते हैं कि तुम भगवान स्वरूप हो, परन्तु इसे भूल जाना ही भ्रमणा है और भ्रमणा पुण्य–पापरूपी अधर्मका मूल है, व उसका फल संसार है । ७६

*

जिसे सुखी होना है उसे कहते हैं कि जो शुद्ध चैतन्य वस्तु है वह सर्वांग ज्ञानसे भरी हुई है, उस ओर सन्मुख होना ही सुखी होनेका मार्ग है – वही धर्म है । सर्वांगज्ञानसे परिपूर्ण चैतन्यवस्तुमें स्थिर होते शुद्धता होती है, और अशुद्धताका नाश होता है – इसका नाम स्वयंका हित अर्थात् कल्याण है । ७७

*

अरे ! अनादिसे तुझे विज्ञानधन आत्माकी महिमा प्रतीत नहीं हुई। अनादिसे बाह्य वस्तुओंमें आश्चर्य लगनेके कारण परमें स्वयंके ज्ञानस्वरूपसे कुछ अधिक विशेषता और विस्मयता भासित होनेसे, वहाँसे नहीं खिसकता। भगवान आत्मा सर्वांगज्ञानसे भरा हुआ है, अर्थात् इसके असंख्य प्रदेशोंमें ज्ञान ही व्याप्त है । उसकी अद्भुतताका अवलोकन करनेका एक बार

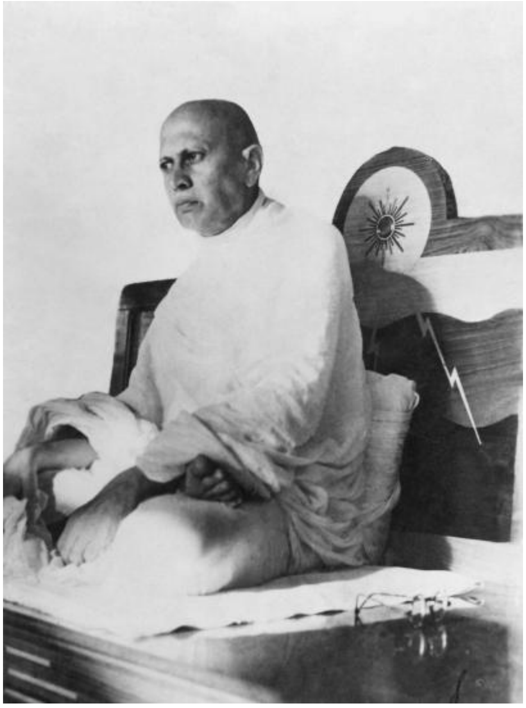

प्रयत्न तो कर । ७८

*

ज्ञानके क्षयोपशमका महत्व नहीं, परन्तु अनुभूतिका महत्व है । इसलिए (कहते हैं कि आत्माका अनुलक्षण कर आत्माके स्वादका अनुभव होना – वही अनुभूति है) और बारह

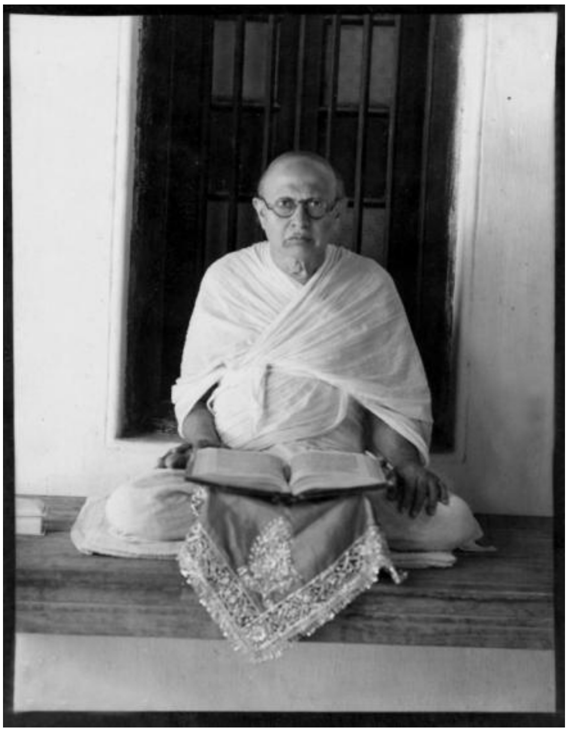

अंगमें भी अनुभूतिका ही वर्णन किया गया है, अनुभूति करनेके लिये कहा है । अनाकुल ज्ञान और अनाकुल आनन्दका अनुभव करना ऐसा बारह अंगमें कहा है । शुद्ध आत्माकी दृष्टि कर स्थिरता करनी - ऐसा उसमें कहा है । बारह अंगसे विशेष श्रुतज्ञान नहीं होता, उसमें चारों ही अनुयोगोंका ज्ञान आता है - ऐसे उत्कृष्ट बारह अंगका ज्ञान भी मोक्षमार्ग नहीं है । बारह अंगके ज्ञाताको सम्यग्दर्शन होता ही है - सम्यग्दर्शन बिना बारह अंगका ज्ञान होता ही नहीं, पर ऐसा क्षयोपशम ज्ञान भी मोक्षमार्ग नहीं, लेकिन अनुभूति ही मोक्षमार्ग है । इतना अधिक (क्षयोपशम) ज्ञान हुआ, इसलिये मोक्षमार्ग बढ़ गया - ऐसा नहीं है। ७९

*

प्रश्न :-व्यक्त पर्याय ख़्यालमें आती है, परन्तु अव्यक्त द्रव्य किस प्रकार ख़्यालमें आए?

उत्तर :- प्रथम शास्त्र आदिसे समझ लेना चाहिए । रागकी पर्याय व्यक्त है, उसे तो ख़्यालमे लेता है परन्तु उसके पीछे अव्यक्त भगवान पड़ा है, उसे लक्ष्यमें लेना चाहिए । व्यक्त पर्यायका अस्तित्व तो एक समयका है। उसके पीछे अव्यक्त भगवान है जिसका त्रिकाल टिकनेवाला महान अस्तित्व विद्यमान है, उसे लक्ष्यमें लेकर उसके संस्कारोंको सर्वप्रथम दृढ़ करना चाहिए, भले ही अन्य लाखों बांते आये । अनेक प्रकारके क्रियाकांड-शुभराग हों, पर उनमें लक्ष्य जानेसे लाभ नहीं, हानि है । स्वके आश्रयसे ही लाभ होता है। प्रथम ऐसे दृढ़ संस्कार डाले, तो पीछे अव्यक्त भगवान अनुभवमें आता है । ८०

*

सम्यक्दृष्टिने शुद्ध स्वरुपका अनुभव किया उसके पश्चात् (उसे ऐसी भावना रहती है कि) वह एक क्षणके लिऐ भी छोड़ने योग्य नहीं। परमात्माके पहलूमें आनेके बाद एक क्षण भी परमात्तमाका पहलू छोड़ने योग्य नहीं और पुण्य-पापके पहलूमें जाना योग्य नहीं। एक क्षण भी शुद्धात्माको विस्मृत करना योग्य नहीं। राग-क्रिया कभी भी ग्रहण करने लायक नहीं, और शुद्धात्मा कभी भी छोड़ने योग्य नहीं। अरे! जिसे रागका रंग चढ़ गया है, उसे परमात्माका रंग कैसे चढ़े? और जिसे परमात्माका रंग चढ़ा है, उसे रागका रंग कैसे चढ़े ? अभी सम्यग्दृष्टिको राग होता तो है, परन्तु रागका रंग नहीं चढ़ता और शुद्धात्माका रंग एक समय मात्र भी नहीं उतरता । सम्यग्दृष्टिको अतीन्द्रिय सुखका अनुभव धारा-प्रवाहरूपसे होता रहता

है – यही इसकी महत्ता है । ८१

*

प्रश्न :– स्थूलबुद्धि हो तो राग और आत्मामे भेगज्ञान कैसे कर सके ?

उत्तर :– आत्माकी बुद्धि स्थूल नहीं है। आत्माके प्रति रस और रुचि हो तो बुद्धि (इस विषयमें) काम करे । संसारकार्योंमें रस है तो वहाँ बुद्धि स्थूल नहीं रहती । सभी पहलुओंका विवेक करके जैसे लाभ हो वैसे करता है। जिस ओर रुचि हो उसी ओर वीर्य कार्य करे, बुद्धि कार्य करे । यदि आत्माके प्रति रस जगे, रुचि जगे तो वीर्य भी कार्य करता है, बुद्धि भी कार्य करती है तथा भेदज्ञानको प्राप्त होती है । आत्मानुभूतिके लिए आत्माके प्रति यथार्थ रुचिकी आवश्यक्ता है। ८२

*

प्रश्न :– अंतरमार्ग बहुत कठिन लगता है?

उत्तर :– अन्तरमार्ग कठिन नहीं है – सहज है, आसान है, सरल है, कठिन तो वह है जो हो न सके । लाखों प्रयत्न करने पर भी परमाणु आत्माका नहीं होता, इसकारण यह कार्य कठिन कहलाता है, परन्तु आत्ममार्ग तो अन्तरप्रयत्नसे प्राप्त होता है । इसलिए जिससे जो हो सके वह उसका सरल एवं सहज कार्य है , केवल अनभ्याससे कठिन लगता है । ८३

*

प्रश्न :– स्वरूपका अनुभव तो हुआ नहीं और शुभको हेय जाने तो क्या स्वच्छन्दी न हो जायेगा ?

उत्तर :– शुभरागको हेय जाननेसे शुभराग नहीं छूटता है । स्वभावका माहात्मय भासित

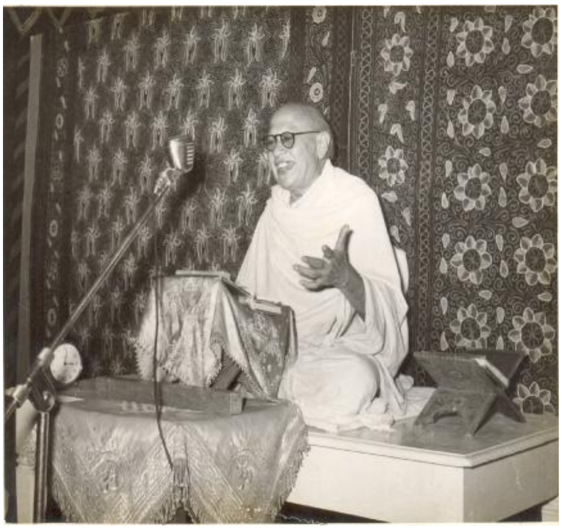

होने पर शुभरागका माहात्म्य छूट जाता है, परन्तु शुभराग नहीं छूटता । शुभराग तो भूमिका अनुसार, अपने कालक्रममें हुए बिना नहीं रहेंगे। वस्तुका जैसा स्वरूप है वैसा यथार्थ ज्ञान करनेसे स्वच्छन्दता नहीं हो सकती । ८४

*

जैसे पुत्रमें पिताका प्रतिभास आता है , वैसे ही मोक्षमार्गी मुनियोंमें वीतरागी जिनभगवानका प्रतिभास – वीतरागताका प्रतिभास झलकता है, मात्र शान्त... शान्त... वीतराग...अकषाय भाव ही (तैरता) है । ''बहिनश्रीके वचनामृत'' पढ़े, तो हृदयमें सत्यकी गहरी चोट लगे ऐसी बातें हैं। यह पक्षपातकी बात नहीं है – वस्तुस्थितिकी बात है । ८५

*

प्रश्न :– यह सत्य बात सुनने पर भी अभी धर्म प्राप्त न हो तो ?

उत्तर :– सत्यका श्रवण आदि रसपूर्वक करे तो उसके संस्कार पड़ते हैं । ऐसे संस्कारोंसे धर्म प्राप्त होता है । अभी भले ही विकल्प न टूटे पर इसके संस्कारोंसे कालान्तरमें विकास

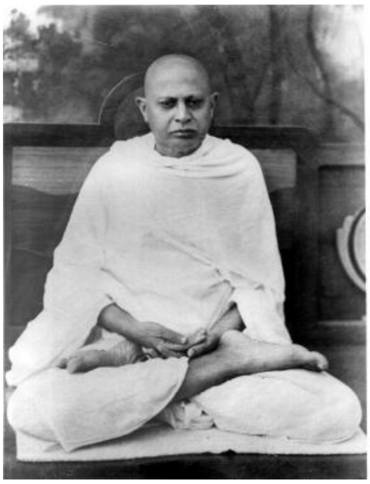

कर, धर्म प्राप्त करतें हैं । ८६

*

मरणका समय कोई पूछ कर नहीं आएगा कि लो, अब तुम्हारे मरनेका काल आया है । अरे ! स्वप्न जैसा संसार है। किसका कुटुम्ब और किसकी मकान-मिल्कियत ! देखते-देखते ही क्षणमात्रमें देह छूट जायगी । कुटुम्ब, कीर्ति और मकान सब यहीं धरे रह जायेंगे । अन्दरसे भगवानको पृथक किया होगा, तो मरण समय यह पृथक रहेगा । जो देहसे भिन्नता न की होगी तो मरण समय भयाकुलताकी चक्कीमें पिस जायेगा, अतः अवसर है तो देहसे भिन्नता कर लेना ही योग्य है । ८७

*

सम्यग्दृष्टिको राग या दुःख नहीं - ऐसा तो दृष्टिकी प्रधानतासे कहा है । परन्तु पर्यायमें जितना आनन्द है, उसे भी ज्ञान जानता है, और जितना राग है उतना दुःख भी साधकको है - ज्ञान वह भी जानता है । पर्यायमें राग है, दुःख है उसे जो नहीं जानता उसके तो धारणा - ज्ञानमें भी भूल है । सम्यग्दृष्टिको दृष्टिका बल बतलानेके लिए कहा है कि उसे आस्रव नहीं, परन्तु जो आस्रव सर्वथा न हो तो मुक्ति होनी चाहिए । ८८

*

(पृष्ठ संख्या ०७ से आगे..)

मुख्य कर लेता है। या किसी न किसी बहाने हम अपने स्वकार्यकी गौणता कर देते हैं और चूक जाते हैं। वैसा कोई भी बहाना इस कार्यमें आगे करने जैसा नहीं है। बस! अपने ध्येयकी सिद्धि हेतु चाहे जैसी कठिनाइयोंका सामना करनेकी तैयारी हमारे निश्चयमें होनी चाहिये। चाहे जैसी परिस्थिति आ जाये मुझे स्वीकार्य है परन्तु अब यह जो अमूल्य चीज़ मिली है, अमूल्य अवसर प्राप्त हुआ है,तो अब इस बातको छोड़ देना किसी भी कीमत पर मंज़ूर नहीं, किसी भी कारण वश मंज़ूर नहीं।

तेरे ध्येयको छोड़ना मत, तेरे प्रयत्नको भी छोड़ना मत। पूरे उत्साह-उमंग पूर्वक ध्येयके लिये प्रयत्नका ज़ोर लगाना, ज़रूर प्राप्ति होगी, होगी और अवश्य होगी ही। इसकी गारंटी ज्ञानी देते हैं। स्वानुभवी इस बातकी गारंटी देते हैं कि, यदि जीव इतनी तैयारी सहित आगे बढ़नेकी ठान ले तो उसे मार्गप्राप्ति न हो या मार्गसे वंचित रह जाये यह असंभव है। जैसे कोई कलकरार कर के दे ऐसी बात है। यह वस्तुका स्वरूप है। भीतरमें आत्मा भी प्रगट होनेके लिये लालायत है, ऐसा ही जीवका स्वभाव है। प्रत्यक्ष होना और प्रगट होना यह जीवका स्वभाव है, किन्तु जीव जब तक ऐसी ठान नहीं लेता तबतक प्रगट होनेमें बाधा है। ये सब बातें पूर्वतैयारीकी हैं!!

(प्रवचनांश... 'बहिनश्री के वचनामृत' बोल-५१, 'अध्यात्म सुधा' भाग - २, पन्ना-१६४,१६५)

बस! एक बार आत्मप्राप्तिकी ठान ले!!

– सौम्यमूर्ति पूज्य भाईश्री शशीभाई

'बहिनश्री के वचनामृत' ५१ नंबरका वचनामृत है (इसमें) प्रेरणा देते हैं। अपने ध्येयके प्रति – परिपूर्ण शुद्धता वह आत्माका ध्येय है और इसके लिये आवश्यक जोश संबंधित प्रेरणा है कि, 'आकाश-पाताल भले एक हो जायें परन्तु भाई! तू अपने ध्येयको मत चूकना, अपने प्रयत्नको मत छोड़ना' शायद तेरे कुटुम्बीजन तेरा विरोध करें या तेरे मित्र छूट जायें। समाज तेरा विरोध कर ले, जो भी हो, तू अपने ध्येयको मत चूकना, अपने ध्येयको मत छोड़ना।

'आकाश-पाताल भले एक हो...' यानी कि कितने ही प्रतिकूल संयोग उत्पन्न क्यों न हो फिर भी ध्येयको चूकनेका प्रश्न ही नहीं हो सकता। जिस मार्ग पर जाना है तो जाना ही है, चाहे जैसी परिस्थितिमें भी जाना ही है। वास्तविक बात तो ऐसी है कि, हमें तैरना है या डूब जाना है? इस बातका निश्चय हमें सबसे पहले करना होगा। समुद्रमें तूफ़ान हो, तूफ़ानमें आपको मील – दो मील पर किनारा दिखता हो इसमें हमारी नाव फँसी हो उसवक्त चाहे जैसे भी किनारे पहुँचनेका ही हम प्रयत्न करेंगे या नहीं? या तूफ़ान है चलो अब प्रयत्न नाकाम रहेगा, मानकर छोड़ देंगे और भले ही डूब मरेंगे और क्या? ऐसा आप विचार करेंगे क्या? नहीं, सो तो करना बिलकुल ठीक नहीं है। वैसे यहाँपर मुक्त होनेका जो ध्येय है, पूर्ण शुद्धिका जो ध्येय है उसे किसी कीमत पर, कोई भी परिस्थितिमें छोड़नेका या चूकनेका सवाल ही नहीं उठता है। चाहे जो भी परिस्थिति पैदा हो जाये। वैचारिक निश्चयमें भी इतनी दृढता तो होनी ही चाहिये। यह तो अभी वैचारिक स्थितिकी बात है। वैचारिक दशामें भी इतनी दृढता तो होनी ही चाहिये कि, चाहे जैसी परिस्थितिमें मेरा कार्य मुझे सिद्ध करना ही है इसमें मुझे तनिक भी च्युत होनेका सवाल ही पैदा नहीं होता।

'आकाश-पाताल भले एक हो जायें परन्तु भाई! तू अपने ध्येयको मत चूकना, अपने प्रयत्नको मत छोड़ना।' प्रयत्नशील ही रहना और ध्येयको लक्ष्यगोचर ही रखना। जब एक ध्येयके लक्ष्यपूर्वक आगे बढ़नेका प्रयत्न हो फिर उस प्रयत्नमें तनिक सी न्यूनताका सवाल नहीं उठता कि, छोड़ देते हैं इसे– यह बातका कोई स्थान नहीं।

मुमुक्षु :– बेटा परदेश जाता हो तब माँ-बाप सीख देते हैं ऐसी बात कही है!

पूज्य भाईश्री :– बहुत प्यारसे बात की है! सामान्यतया क्या होता है कि जीव प्रतिकूलताओं को

(अनुसंधान पृष्ठ संख्या ०६ पर..)

गुरुदेवश्रीकी वाणी – दिव्यध्वनिकी झाँखी !!

पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रति भक्तिपूर्ण हृदयोद्गार!!
– सौम्यमूर्ति पूज्य भाईश्री शशीभाई

पूज्य गुरुदेवश्री और पूज्य भाईश्री

'पूज्य गुरुदेवश्री'को वाणीका योग प्रबल है,...' अर्थात् बलवान योग है। अनेक न्यायोंकी अभिव्यक्ति उनके द्वारा हुई और वर्तमान उपलब्ध जैन साहित्यको इस दृष्टिसे देखा जाये तो 'गुरुदेवश्री' द्वारा जो स्पष्टता हुई है ऐसी स्पष्टता भूतकालमें किसीके द्वारा हुई हो ऐसा नहीं देखा जाता। यह बात निष्पक्षपातरूपसे कह सकते हैं। गुरुदेवका पक्ष करके कोई बात नहीं है। निष्पक्षपातरूपसे कोई भी मध्यस्थ व्यक्ति इस दृष्टिबिंदुसे जैनसाहित्यकी जाँच करे, उपलब्ध जैनसाहित्यकी समीक्षा करे तो स्पष्ट भासित होगा कि इतनी स्पष्टता अन्यत्र कहीं नहीं मिलती! ऐसा वाणीका प्रबल योग है!

'श्रुतकी धारा ऐसी है कि...' अब ज्ञानकी बात कहते हैं। पहले वाणीकी बात की। अब 'गुरुदेव'के श्रुतज्ञानकी बात करते हैं कि, श्रुतज्ञानकी धारा ऐसी है कि,'लोगोंको प्रभावित करती है और 'सुनते ही रहें' ऐसा लगता है' उनके श्रुतज्ञानमें से, श्रुतज्ञानके निमित्तसे जो वाणी निकलती है भावश्रुतज्ञानकी प्राप्ति के कारण हैं और इसके अंदर आत्मरस सराबोर होने से भले ही वाणी का बाह्य दिखाव या वक्तृत्वता ऐसी न हो फिर भी वाणीका कोई प्रकार ही ऐसा था, इतनी मधुरता थी कि मानों 'सुनते ही रहें' – ऐसा लगे!! एक घंटेका प्रवचन कब पूरा हो गया इसका पता तक नहीं चलता था। कईबार तो!! बस! एक घंटा बीत गया? ऐसा लगे।

मुमुक्षु :– ऐसा क्यों होता होगा?

पूज्य भाईश्री :– इसमें ऐसा है कि, जब सुननेवालेको रस बढ़ता है तो समय कहाँ बीत गया इसका पता नहीं रहता। यह बात हरएक विषयमें है। जिसको जिस विषयमें रस बढ़ता है तब उसे समय कैसे बीत गया इसका पता नहीं रहता है – यह तो बहुत स्वाभाविक है।

'श्रुतकी धारा ऐसी है...' सोगानीजीने इस विषयमें एक पत्रमें लिखा है कि, 'आत्मधर्म' आया और पूज्य गुरुदेवका प्रवचन (पढ़ा तो ऐसा लिखा कि) 'आत्मरससे भीगी हुई वाणी...'

चैतन्यरससे सराबोर ऐसी वाणीका पठन व श्रवणसे मानों तृप्ति ही नहीं होती अर्थात् सुनते ही रहें ऐसा लगता है। यूँ तो 'गुरुदेवश्री' तीर्थंकरद्रव्य थे इसलिये स्वतः ऐसा योग था। क्योंकि भविष्यमें दिव्यध्वनिमें वाणीका प्रकार ऐसा ही आनेवाला है! भले ही वहाँ तो अक्षरात्मक वाणी नहीं है, ॐ कारनाद है, ॐ कार ध्वनि है; परन्तु सुननेवालेको तो जैसे कानमें कोई अमृतकी धार बहाता हो ऐसा मधुर लगे! ये संगीत लोगोंको मधुर लगता है कि नहीं? किसीका गला अच्छा हो तो ऐसा नहीं कहते क्या? कि बहुत मधुर कंठ है! बहुत अच्छा गाते हैं! जगतमें आम मनुष्यको भी इसप्रकारका पुण्ययोग होता है। जबकि वे तो सामान्य जीव हैं, धार्मिक दृष्टिसे वह कोई विशिष्ट योग्यता नहीं है। फिर फिल्मी गानें या भजन गानेवालेकी आवाज़की मधुरता हो यह तो पुण्यका सामान्य प्रकार है। लोग तो इसे कमाईका साधन भी बनाते हैं कि नहीं?

तीर्थंकरके पुण्य तो सर्वोत्कृष्ट, लोकोत्तर पुण्य हैं! तो उनकी वाणीकी मधुरता कैसी होगी! सामान्य जीवको इतना पुण्ययोग यदि सम्भव है तो दिव्यध्वनिकी मधुरता कितनी होगी!! कि सुननेवालेको ऐसा ही लगे कि 'सुनते ही रहो'! वहाँसे सुनते हुए कोई बोर हो जाये और उठ जाये या किसीको भूख लगे और खाने चला जाये या प्यास लगे और पानी पीने या कोई टट्टी-पेशाबको चला जाये ऐसा कोई प्रकार नहीं बनता। सुनते हुए किसीको उठनेका मन ही नहीं। जैसे मंत्रमुग्ध हो जाते हैं! अरे! आम तौर पर अन्य लौकिक उत्कृष्ट वक्ता हो तो भी लोगोंको इतना रस आता है कि दूसरी-दूसरी सब प्रवृत्तिका त्याग कर सुनते रहते हैं। तीर्थंकर परमात्मा, जिनेन्द्र परमात्माकी तो क्या बात करें!! इसका तो अनुमान लगाना भी मुश्किल है!

...'गुरुदेव'की वाणीको 'सुनते ही रहें' ऐसा लगता था इसके पीछे निहित कारणका विचार करें तो उनका खुदका जो रस था, श्रुतकी धारामें ज्ञानरस, चैतन्यरस इतना विशिष्ट था कि जो उनकी वाणीमें झलकता था। अतः सुननेवालेको भी रस आता था, बहुत रस आता था और मानों 'सुनते ही रहें' ऐसा लगता था। पूज्य बहिनश्रीने तो अपने भावोंको व्यक्त किये हैं इसपर से सबको स्वलक्ष्य पूर्वक अपने परिणाम व अपने भावोंको जाँच लेना चाहिये।

(प्रवचनांश..'बहिनश्री के वचनामृत' बोल-८ प्र. क्र.- ९,'अध्यात्म सुधा' भाग - १, पन्ना-१०६ से १०८)

*

पूज्य गुरुदेवश्रीका उपकार कितना?

– सौम्यमूर्ति पूज्य भाईश्री शशीभाई

मुमुक्षु :– ऐसा आत्मा 'गुरुदेव'ने बताया, हमारे मूल दिगम्बरमें तो बात ही नहीं थी।

पूज्य भाईश्री :– शास्त्रमें थी लेकिन दिगम्बर संप्रदायमें बात लुप्तप्राय: हो चुकी थी, लुप्त हो चुकी थी। तीनों फिरकोंमें (मुख्य संप्रदायों – दिगम्बर, श्वेताम्बर, स्थानकवासी) लोग बाह्य क्रियाकांडमें फँसे थे। इसमें से एक नया अध्यात्मका युग पूज्य गुरुदेवश्री – एक युगपुरुषके द्वारा, प्रसिद्ध हुआ ऐसा कहना होगा।

मुमुक्षु :– कितना उपकार!

पूज्य भाईश्री :– इसका कोई नाप नहीं निकल सकता। उपकारका नाप निकालना अशक्य है। 'गुरुदेव'का उपकार कितना? कि इसका कोई नाप नहीं निकल सकता। जीवका संसारसे छुटकारा हो जाये ऐसा है। संसारको चूर–चूर कर दे! संसार? जैसे मानों कोई चीज़ ही नहीं है। तू इतना महान है कि जिसके एक क्षणवर्ती अनुभवमें संसारका नाश है। तेरी तो क्या बात करें। ऐसी बात है।

मुमुक्षु :– 'सोगानीजी'ने कहा मेरे लिये अनंत तीर्थंकरसे अधिक हैं!

पूज्य भाईश्री :– हाँ, मतलब इसमें नाप नहीं आया न? इससे कितना अधिक? कि जिसका कोई नाप नहीं उतना अधिक!

(प्रवचनांश...'बहिनश्री के वचनामृत' बोल–४७, प्रवचन क्र.– ४२, 'अध्यात्म सुधा' भाग – २, पन्ना – १२४)

आभार

'स्वानुभूतिप्रकाश' (अप्रैल–२०२५, हिन्दी एवं गुजराती) के इस अंककी समर्पणराशि

स्व. श्री डोलरभाई हेमाणीके स्मरणार्थ,

हस्ते श्रीमती छायाबहिन शैलेषभाई शाहके द्वारा

ट्रस्टको साभार प्राप्त हुई है।

अतएव यह पाठकों को आत्मकल्याण हेतु भेजा जा रहा है।

एक गरजती दिव्यमूर्ति !!

पूज्य गुरुदेवश्रीको आहारदान करते हुए पूज्य सोगानीजी

पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रति भक्तिपूर्ण हृदयोद्‌गार!!
– पूज्य सोगानीजी

पूज्य 'गुरुदेव' की स्मृति इस समय भी आ रही है व आँखोंमें गर्म आँसू आ रहे हैं कि उनके संग रहना नहीं हो रहा है। उनका असंगरुचिका उपदेश (अथवा स्वसंगका) कानोंमें गूँजता रहता है और उसकी रमणतासे ही यहाँ की उपाधियाँ ढीली-सी रहती हैं। उस दिनकी प्रतीक्षामें हूँ कि कब उस गरजती हुई दिव्यमूर्तिके चरणोंमें शीघ्र अपने आपको पाऊँ।... (पत्रांश-४)

*

हे 'गुरुदेव'! लोकोत्तर लाभ हेतु आपके वचनों पर श्रद्धा की है, आशीर्वाद देता हुआ आपका मोहक चित्र देखा है। आपके आशीर्वाद से पूर्ण आनंदमयी निधि को प्राप्त हो जाऊँ और अनंत पदार्थों के तीनकाल के अनंते भाव वर्तमान एक-एक भाव से अविच्छिन्न प्रत्यक्ष होते रहें – ऐसी तीव्र अभिलाषा है। दरिद्री को चक्रवर्तीपने की कल्पना नहीं होती। पामरदशावाले को 'भगवान हूँ....भगवान हूँ' की रटन लगाना, हे प्रभो! आप जैसे असाधारण निमित्त का ही कार्य है। परिणति को आत्मा ही निमित्त होवे अथवा भगवान.... भगवान की गुंजार करते आप; अन्य संग नहीं; यह ही भावना।
(पत्रांश-२६)

*

परम कृपालु 'गुरुदेवश्री'के मुखारविंदसे मुझ संबंधी निकले सहज उद्‌गार आपको अमुक-अमुक स्थानोंके भाईयोंसे ज्ञात हुए सो आप सबने स्वाभाविक प्रसन्नता और उत्साहपूर्वक मुझे लिखे, सो जाने।

मुक्तिनाथकी इस दास प्रत्ये सहज कृपादृष्टि इस बातका द्योतक है कि अति उमंगभरी मुक्तिसुंदरी अप्रतिहतभावे, मुझ कृतकृत्यके साथ, महा आनंदमयी अस्खलित, परमगाढ आलिंगनयुक्त रहकर शीघ्रातिशीघ्र कृतकृत्य होना चाहती है।

परम पिताश्रीने हम सब पुत्र मण्डलको अटूट लक्ष्मीभण्डार (दृष्टिरूपी चाबी द्वारा खोलकर) भोग हेतु प्रदान किया है, इसे नित्य भोगो, नित्य भोगो, यह ही भावना है। (पत्रांश-५१)

*

('द्रव्यद्रष्टि प्रकाश' मेंसे साभार उद्धृत)

श्री महावीर भगवान जन्मकल्याणक एवम् पूज्य गुरुदेवश्रीका संप्रदाय परिवर्तन दिन

(चैत्र सुदी १३, दि : १०-०४-२०२५)

– सौम्यमूर्ति पूज्य भाईश्री शशीभाई

आज भगवान महावीरस्वामीका जन्म कल्याणक दिन है। वे हमारे अंतिम तिर्थाधिनाथ हुए। प्रत्येक तीर्थंकरके समयमें कालके अनुसार प्रभावना होती है। काल अनुसार मतलब क्या? काल निकृष्ट होनेपर भी माहौल, धर्ममय माहौलका जमावड़ा लगा हो और तब तक तो अभी चतुर्थ आरा तो था ही। परन्तु ज्यों-ज्यों कालक्षेप होता जाता है त्यों-त्यों तीर्थंकरोंकी आयु कम होती जाती है। अतः इनका प्रभावना काल भी कम होता जाता है। भगवान महावीरस्वामीका प्रभावना काल ३० सालका ही था क्योंकि उनका आयुकाल ७२ सालका ही था। फिलहाल तो पंचमकालमें भी कोई-कोई व्यक्ति १०० सालके देखे जाते हैं। अस्सी-नब्बेके तो कई सारे होते हैं। परन्तु हीनकालके कारण भगवानकी आयु भी, आखिरका देह चरमशरीर ७२ सालका था। इसमें से साड़े बारह साल तो मुनिदशामें गए। तीस साल गृहस्थाश्रममें बीते, बारह-साढ़े बारह साल मुनिदशामें बीते, तीस साल केवलज्ञानदशामें गए। हालाँकि धर्मप्रवृत्तिका बड़े पैमानेमें फैलावा हो ऐसा ही सुयोग तीर्थंकर प्रकृतिके उदयके साथ सुपात्र जीवोंका होता है। पात्रवानजीव खिँचे चले आते हैं और इसका सबसे बडा दृष्टांत हैं गौतमस्वामी। पात्रताथी – तो बहुत दूर यानि वेदांतमेंसे खिँचे चले आये। इनके उपदेशकी परंपरा गणधरोंके उपदेशसे चली। गणधरदेवोंने बारह अंगकी रचना की जिसके उपदेशको आचार्योंने अवधारण कर रखा। टिकाये रखा। स्वयं धर्मरूप परिणमन करके धर्मको टिकाये रखा। श्रुतको अपनी ताकतसे ग्रहण कर रखा। काल क्रममें अनेक आचार्य हुए, बहुतसे ज्ञानी हुए। इन सबका धर्मको टिकाये रखनेमें बहुत बड़ा योगदान रहा। और वर्तमानमें जो भी धर्मसाधन हमें प्राप्त हैं, हमारे हाथमें हैं इसमें इन सबका उपकार है। भगवान महावीरस्वामीसे लेकर गणधर देवोंसे लेकर आचार्यों, मुनियों व सत्पुरुषों-ज्ञानियों ये सब धर्मप्रवर्तनके कार्योंमें उपकारी हैं। जिनके कारण जो भी साहित्य बचा इसका लाभ वर्तमानमें हम लोग ले पाते हैं। मंदिर बने, शास्त्रोंकी रचनाएँ हुई ये सारे धर्मप्रभावनाके

बाह्य साधन हैं। उन्हें अंतर साधनके साथ जोड़नेवाले धन्य हो जाते हैं। उनके संसारका निस्तार हो जाता है। सबसे बडी बात यह है कि अनंतकालमें जीव एक बार भी धर्मकी प्राप्ति करे तो इसका संसारसे छुटकारा हो जाता है। परिभ्रमणके चक्रवातसे वह निकल जाता है और अंततः स्थिर होकर सिद्धालयमें, पूर्ण दशामें, पूर्णानंदकी दशामें बिराजमान हो जाता है। आज वह दिन है और गुरुदेवश्रीका परिवर्तनदिन भी आज ही है। यह कितने नंबरका है याद नहीं लेकिन मंदिरमें बोर्ड पर लिखा तो था कि कौनसा परिवर्तनदिन है। आज चैत्र सुदि तेरस यानी परिवर्तनका दिन है।

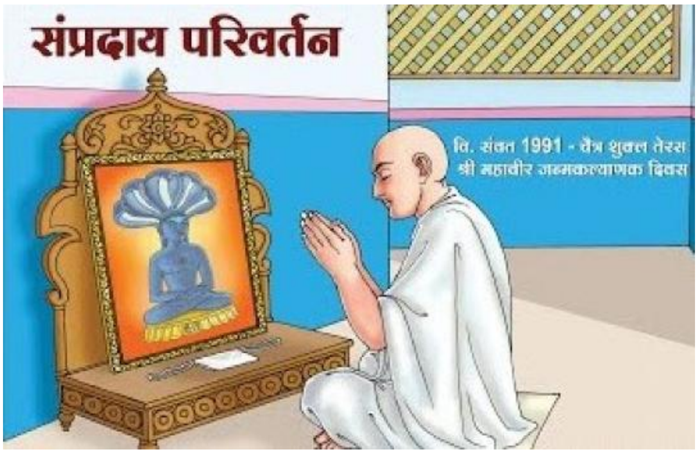

मुमुक्षु :- इक्यानवेमें परिवर्तन किया था।

पूज्य भाईश्री :- इक्यानवे, हाँ! बराबर पचास और इक्यावन यानी ६२वाँ परिवर्तन दिन है। अभी ६२ सालकी उम्र वाले कम मिलेंगे। परिवर्तन किया उसे ६२ साल हुए। 'गुरुदेवश्री'का जन्म स्थानकवासी संप्रदायमें - श्वेतांबरमें हुआ जहाँ कोई मार्गका अता-पता नहीं था नाहि है। जबकि (स्वयं) तो धर्मको प्राप्त होनेवाले थे तो खोज करते-करते दिगम्बर शास्त्र तक पहुँच गये। वरना तो संप्रदायसे निकलना मुश्किल होता है और इसमें भी दीक्षा लेनेके पश्चात् निकलना तो बहुत-बहुत मुश्किल होता है। दीक्षाके पहले तो आदमी थोड़ा free होता है, व्यक्ति चाहे कहीं भी जाए कोई नहीं पूछता। किन्तु यहाँ संप्रदायके बीच वर्तमानमें साधुओं को समाजका प्रतिबंध बहुत होता है, जंगलवासी मुनियोंको कोई प्रतिबंध नहीं होता। समाजके बीच रहेंगे तो समाजका प्रतिबंध तो लागू होगा ही। इसके बावजूद भी ये तो वीर्यवान थे इसलिये संप्रदायके रूढ़ि-रिवाज़ और परम्पराको तोड़कर बाहर निकल गये। स्वयंने धर्म प्राप्ति की और अनेकोंको धर्मकी प्राप्ति करायी।

पूज्य गुरुदेवश्रीका कार्य भी तीर्थंकर जैसा हो गया। ऐसे महापुरुषका उदय बहुत महाभाग्यसे कभी कबार होता है। एक युगपुरुष जैसे हैं। उनके निमित्तसे हज़ारों लोग सन्मार्गके प्रति प्रेरित होते हैं। फिर इसमेंसे योग्यतावान हो वह मार्गप्राप्त करते हैं, और सही दिशाके प्रति अग्रेसर होते हैं, कई सारे श्वेतांबर, स्थानकवासी, दिगम्बर, अजैन लोगोंका सन्मार्गके प्रति झुकाव हुआ। इसके पीछे 'गुरुदेवश्री'का उपकार है!! इसतरह 'गुरुदेवश्री'ने स्वयं श्रुतकी उपासना बहुत की थी। आचार्योंके शास्त्र, ज्ञानियोंके शास्त्र, इसकी उपासना बहुत की थी। खुद इतना पढ़े-लिखे

नहीं थे फिर भी अध्यात्मके और सन्मार्गके गूढ़ भावोंके रहस्यका समाधान कर सकते थे और दूसरोंको समझा भी सकते थे। इसके लिये सही दृष्टिकोण होनेमें 'गुरुदेवश्री'का उपकार है। शास्त्र पढ़ना एक बात है और इसके लिये सही दृष्टिकोण प्राप्त होना यह दूसरी बात है। सही दृष्टिकोणसे शास्त्र स्वाध्याय हो तो ही इसका लाभ है। जीव अनादिसे निमित्ताधीन दृष्टिवान है और रागकी दृष्टिवाला है और रागकी प्रधानतामें खड़ा है। ऐसी स्थितिमें कोई भी शास्त्रका अध्ययन करे तो इसमें इसका फल नहीं मिलता। फल नहीं आनेका मतलब भिन्न ज्ञानमय आत्माका ज्ञान नहीं होता। इससे एकत्वबुद्धि जो चल रही है। ऐसे महापुरुषका उदय होता है तब बदलाव आता है और सही दृष्टिकोणकी भी प्रसिद्धि होती है। 'गुरुदेवश्री'ने बहुत स्पष्टता की, इस अपेक्षासे देखा जाये तो गुरुदेवश्रीने बहुत विषयको खोला। पूज्य बहिनश्री भी इस वचनामृतमें 'गुरुदेवश्री'के प्रताप की बात करते हैं।

मुमुक्षु :- अंतर परिवर्तन तो पहले हुआ ये तो हुआ सार्वजनिक परिवर्तन न?

पूज्य भाईश्री :- हाँ, यह सार्वजनिक परिवर्तन। धर्म परिवर्तनसे आत्माका परिवर्तन तो हुआ था तेरह वर्ष पहले। यह तो सार्वजनिक रूपसे परिवर्तन तो इसलिये ताकि किसीको भ्रांति न रहे कि, ये दोनों प्रकारके मार्ग सही हैं। इसलिये स्पष्ट कर दिया कि एकमात्र दिगम्बर है वही सत्य है बाकी सब जगह गडबड़ी है। सार्वजनिक रूपसे परिवर्तन करके जगतको यह बोध मिले ऐसा उनका उद्देश्य था। वरना लोग छल ग्रहण करके भ्रांतिका फैलाव करें। विरोधी लोग तो कई प्रकारके छल ग्रहण करके भ्रांतिको फैलाते थे। कुछ एक दिगम्बर लोग ऐसा प्रचार करते थे कि भले ही ये अभी दिगम्बरकी बातें करते हैं लेकिन वापिस सबको श्वेतांबरमें खींचकर ले जायेंगे। अभी तो सबके साथ छलावा करनेके हेतु से ऐसा करते हैं, वैसा करते हैं। सो तो जिसकी जैसी मनोवृत्ति होगी वैसी ही बात करेंगे। जैसी खुदकी मानसिक परिस्थिति है वैसी ही बात तो करेगा न कोई भी व्यक्ति।

मुमुक्षु :- स्वानुभव होनें के पश्चात् तेरह साल बाद परिवर्तन किया?

पूज्य भाईश्री :- हाँ, तेरह साल बाद परिवर्तन किया।

मुमुक्षु :- तेरह वर्ष संप्रदायमें रहे?

पूज्य भाईश्री :- संप्रदायमें रहकर भी उपदेश सन्मार्गका देते रहे परन्तु थोड़ा दबना पड़ता था। बेख़ौफ़ स्पष्टरूपसे नहीं कह सकते थे कि 'समयसार' ऐसा कहता है, 'कुंदकुंदाचार्य' ऐसा कहते हैं, नाम नहीं ले पाते थे, अपने उपकारीका नाम न ले सकें तो अंतरमें दुःख तो होगा ही न! वरना उपदेश तो सन्मार्गका ही देते थे। और स्वयं को छोड़नेकी बात आयी तब भी लोगोंने आग्रह किया और कहा, आपको कहाँ कोई रोक-टोक करते हैं, आप संप्रदायमें रह-रहकर जो भी करना हो कीजिये न, संप्रदायका त्याग मत कीजिये, बहुत बड़ा तूफान हो जायेगा

और जब त्याग किया तो बड़ा तूफान हुआ भी। ऐसे बड़े बदलावके सामने तूफान होना स्वाभाविक है। परन्तु गुरुदेवश्री तो बहुत अटल वीर्यमान थे इसलिये ये तूफान आदि उनका कुछ नहीं बिगाड सकते थे। अंततः पुनः जो होना था सो ही हुआ। परिवर्तन करके यहाँ सोनगढ़में निवास किया, (अपने भावनगरके एक मुमुक्षु) के मकानमें परिवर्तन किया। उनके पिताश्रीके समयमें ये तो अभी छोटे थे।

मुमुक्षु :- 'स्टार ऑफ इन्डिया'।

पूज्य भाईश्री :- हाँ, मकानका नाम 'स्टार ऑफ इन्डिया' उनके पिताश्री थे न! इनके मकानमें रहे थे और इसे खाली करके दे दिया था और खुद दूसरे मकानमें रहने चले गये थे। गुरुदेवश्री वहाँ स्वाध्याय करते थे, बादमें प्रवचन देना शुरू हुआ। तत्पश्चात ९१'वीं सालमें सर्वप्रथम यह स्वाध्यायमंदिर बना। जिनमंदिर तत्पश्चात ९४'में बना। प्रवचन मण्डप बादमें २००३में हुआ। २०३०में परमागममंदिर बना। २०३९ या २०४०में नंदीश्वर जिनालय बना। इसप्रकार सब फूला-फाला।

(प्रवचनांश... 'स्वानुभूतिदर्शन' प्र. क्र.- ११०, 'अध्यात्म पिपिसा' भाग - ४, पन्ना- २३७ से २४०)

पूज्य श्री निहालचंद्रजी सोगानी की ११४ वीं जन्मजयंती महोत्सव प्रसंग पर सुवर्णपुरी सोनगढ़ में धार्मिक कार्यक्रम

पूज्य गुरुदेवश्री के महापुराण के पात्र ऐसे पूज्य निहालचंद्रजी सोगानीजी की ११४ वीं जन्मजयंती उनकी साधनाभूमि सुवर्णपुरी में दि.०६-०५-२०२५ से दि.०८-०५-२०२५ त्रिदिवसीय धार्मिक कार्यक्रम सहित अत्यंत आनंद उल्लासपूर्वक मनाने का निश्चित किया गया है। यह धार्मिक कार्यक्रम सोनगढ़ स्थित 'गुरुगौरव' स्मारक में मनाया जायेगा।

इस प्रसंग पर प्रातः पूज्य बहिनश्री की तत्त्वचर्चा (आश्रम में), जिनदर्शन तथा पूजन जिनमंदिर में, पूज्य गुरुदेवश्री का सीडी प्रवचन स्वाध्याय मंदिर में, तत्पश्चात् पूज्य भाईश्री शशीभाई के 'द्रव्यदृष्टि प्रकाश' ग्रंथ पर 'गुरुगौरव' स्मारक में प्रवचन, दोपहर में पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन, बादमें पूज्य सोगानीजी का गुणानुवाद 'गुरुगौरव' में, रात्रि में पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन स्वाध्याय मंदिर में और 'गुरुगौरव' स्मारकमें भक्ति एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम सहित मनाया जायेगा।

दि.०८-०५-२०२५ पूज्य सोगानीजी के जन्मजयंती दिन पर पूज्य भाईश्री के प्रवचन के बाद जन्मवधामणा तथा भक्ति का कार्यक्रम रहेगा।

इस प्रसंग पर सभी मुमुक्षु भाई-बहनों को पधारने का हार्दिक निमंत्रण है।

आयोजक : श्री सत्सुख प्रभावक ट्रस्ट, भावनगर

पूज्य बहिनश्रीके हृदयमेंसे प्रवाहित
गुरु गुण संभारणा

गुरुदेव की वाणी की बुलंद आवाज़ ही कोई अलग... अभी उनके आश्रित प्रवचन देते हैं परंतु गुरुदेव की वाणी तो कोई अलग ही प्रकार की... सिंह गर्जना जैसी बुलंद वाणी, वह वाणी अलग ही थी। अभी टेप में गुरुदेव की वाणी... दूर से तो जैसे गुरुदेव ही बोल रहे हैं ऐसा लगे। थोड़ी देर तो भूल ही जाते हैं, लगता है जैसे कि व्याख्यान शुरू हो गया। बरसों के संस्कार होने से ऐसा लगता है। गुरुदेव जैसे मौजूद ही हैं ऐसा लगे। उनकी वाणी ने सबको जीवंत रखा है। गुरुदेव की प्रबल वाणी के निमित्त से क्रांति हो गई। गुरुदेव स्वयं जागृत हुए और सारे भारत को जागृत किया। कोने-कोने में सबको जागृत किया। ५३.

*

चैतन्य पूरा ज्ञान का सागर, आनंद का सागर, शुद्धता से भरा है। ऐसी इसकी पहचान करानेवाले गुरुदेव थे। गुरुदेव चैतन्य की वार्ता, शुद्धात्मा की वार्ता करते थे। ऐसी चैतन्य की वार्ता जगत में और कहीं नहीं है। इसकी स्वानुभूति कर, अंतर में भेदज्ञान कर ! तू अंतर में जा। इस तरह चैतन्य की बात सुननेवाले के बाहर के रस रूखे हो जाते थे। ५५.

*

गुरुदेव ने चैतन्य का प्रकाश बाहर लाकर सबको दिखाया। तुम हो, तुम जैसे हो वैसा तू स्वयं को देख। गुणों का वैभव देख ! गुणों का वैभव फैला-फैलाकर बताया। यह तेरा वैभव ! तू देख! ऐसी वाणी ! लोग सुनकर दंग रह जाते। गुरुदेव क्या कहना चाहते हैं ! ऐसा तो कभी सुना ही नहीं। कहीं मिला नहीं।

षट् आवश्यक - पद्मनंदि के प्रवचन में कितने ज़ोर से आह्वान किया है ! उनकी वाणी पुरुषार्थप्रेरक थी। एक छलाँग पर सम्यक्दर्शन, दूसरी छलाँग पर मुनिपना, और तीसरी छलाँग पर केवलज्ञान, ऐसा कहते थे। उनकी ऐसी ज़ोरदार वाणी सुनकर जीव को पुरुषार्थ का बल मिल जाता है। ५७.

*

अभी जो 'अमृत वरस्यां रे पंचमकालमां' (ऐसा गाते हैं) इसके बजाय तब ऐसा गाते थे कि ''अमृत वरस्यां रे रविना प्रभातमां'' रविवार की रात को अमरेली के उपाश्रय में ॐ नाद आया था, दिव्यध्वनि सुनाई दे रही है, वादित्र बज रहे हैं, इत्यादि आया था। ५८.

*

पूज्य गुरुदेव ने ऐसा मार्ग बताया कि मत-मतांतर अवरोधरूप न हो। सब स्पष्ट करके गये

हैं। जगत का आश्चर्य आत्मा है। जिनेन्द्र भगवान आश्चर्यकारी हैं और गुरुदेव भी आश्चर्यकारी थे।

उनका अतिशय इतना था कि जहाँ उनके चरणस्पर्श होते वहाँ सब सुलझ जाता। भगवान विहार करते हों तब काँटें झुक जाते हैं। कई योजन तक रोग नहीं होता, सब बैर-विरोध भूल जाते, वैसे पंचमकाल में गुरुदेव का तीर्थंकर द्रव्य आश्चर्यकारी था। उनकी मौजूदगी में जो हुआ वह आश्चर्यकारी हुआ है। ५९.

*

पूज्य गुरुदेव ने तो एक ही मंत्र दिया है कि शुद्धात्मा को ग्रहण करना। यह एक ही लगाम हाथ में आ गयी तो (शुद्ध) परिणाम स्वतः होंगे, परिणाम को देखने नहीं पड़ेंगे। एक शुद्धात्मा की लगाम हाथ में रखना। शुद्धात्मा को पहचानो - यह मंत्र पूज्य गुरुदेव ने दिया है। ६०.

*

उपशम, क्षयोपशम, क्षायिकभाव भी आत्मा में नहीं हैं। एक पारिणामिक भावस्वरूप आत्मा है। यह पूरा स्वरूप गुरुदेव ने बताया है। ६१.

*

आचार्यदेव ने अपने शब्दों से निज वैभव दिखाया। गुरुदेव ने अपने वैभव से समयसार दिखाया। गुरुदेव के प्रत्येक शब्द में अनंतता भरी है। आत्मा में अनंतता भरी है। आत्मा के एक अंश में अनंतता भरी है। भगवान की दिव्यध्वनि का मर्म जानना मुश्किल है। भगवान की दिव्यध्वनि के शब्दों में अनंत रहस्य भरे हैं। गुरुदेव ने जो समयसार का भाव स्पष्ट किया है उस भाव के सामर्थ्य को समझ पाना मुश्किल है, अनंत रहस्य हैं। ६२.

*

ऐसे विषमकाल में ऐसे महापुरुष का योग मिलना अति-अति दुर्लभ है। उनके दर्शन व वाणी कितने दुर्लभ हैं यह अभी सब भक्तों को वेदनपूर्वक स्पष्ट समझ में आ रहा है। पुण्य के ढेर उछले बिना ऐसे महापुरुष का योग इस काल में कहाँ से मिले ? भारत के महाभाग्य थे कि गुरुदेव का यहाँ जन्म हुआ, इतने सालों तक सब को अपूर्व लाभ मिला।

उनका आगमन होते ही मंगल-मंगल हो जाये ! पूरी नगरी बदल जाये ! मुंबई नगरी में पंद्रह-पंद्रह, बीस-बीस हज़ार लोगों के बीच व्याख्यान देते हों तब एकाग्रता से सब टकटकी लगाकर देखते रहते, अद्भुत शांति से प्रेमपूर्वक ज्ञान-वैराग्य से सराबोर गुरुदेव की अमृतवाणी श्रवण करके, सब अपनी-अपनी शक्ति अनुसार कम-बेशी समझते, लेकिन सब ऐसी छाप लेकर जाते कि वास्तव में कोई महापुरुष हैं, धर्मपुरुष हैं। गुरुदेव ने भारत को बहुत दिया है। ४५-४५ साल तक श्रुत के धोध (प्रपात) बरसाएँ हैं। भारत पर उनका अपार उपकार है। ६५.

*

पूर्णताका अप्रतिहत पुरुषार्थ !!!

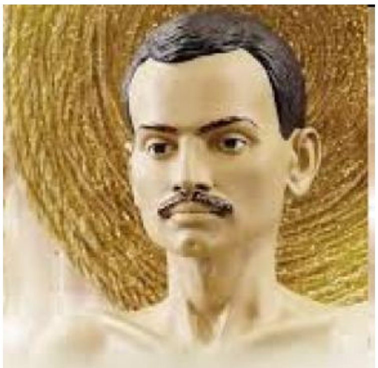

परम कृपालुदेवकी अंतरंग अध्यात्मदशा पर विवेचन
– सौम्यमूर्ति पूज्य भाईश्री शशीभाई

पत्रांक–९५१

राजकोट, फागुन वदी ३, शुक्र, १९५७

''अति त्वरासे प्रवास पूरा करना था। वहाँ बीचमें सहराका रेगिस्तान सम्प्राप्त हुआ।

सिरपर बहुत बोझ रहा था उसे आत्मवीर्यसे जिस तरह अल्पकालमें वेदन कर लिया जाये उस तरह योजना करते हुए पैरोंने निकाचित उदयमान थकान ग्रहण की।

जो स्वरूप है वह अन्यथा नहीं होता, यही अद्‌भुत आश्चर्य है। अव्याबाध स्थिरता है।

शरीर–स्थिति उदयानुसार मुख्यतः कुछ असाताका वेदन कर साताके प्रति।''

परमकृपालुदेवकी सम्यक्‌पुरुषार्थ सहित प्रथमसे ही ऐसी भावना थी कि परिभ्रमणका प्रवास त्वरासे (इसी भवमें) पूरा करना, और तद्‌अनुसार उन्होंने पुरुषार्थ उठाया था, वहाँ बीचमें शरीर रोगरूप सहराका रेगिस्तान सम्प्राप्त हुआ।

पूर्व संचित कर्मका बोझ कर्ज़रूप अपने सिरपर बहुत था, उसे आत्मिक पुरुषार्थसे जिस तरह अल्पकालमें वेदन कर लिया जाये, ऐसे अप्रतिहत पुरुषार्थकी योजना भी की, और जैसे ही स्वरूपमें पुरुषार्थकी दौड़ लगायी कि पेरौंने (शरीरधर्मने) निकाचित यानी कि जिसमें कोई फेरफार नहीं हो सके, ऐसी उदयमान विध्नरूप थकान ग्रहण की।

वर्तमान पंचमकालमें पुरुषार्थकी पूर्णता प्रगट करके परमात्मपदकी प्राप्ति और निर्वाणपद प्राप्त हो, ऐसी योग्यतावाले आत्मा इस क्षेत्रमें, इस कालमें जन्म नहीं लेते। (इस कालमें निर्वाणपदको प्राप्त करनेवाले महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेते हैं) ऐसा वस्तुस्वरूप है – जो केवलज्ञान द्वारा परमागमोंमें प्रसिद्ध हुआ है। उसमें कुछ अन्यथा नहीं होता, ऐसा जो केवलज्ञानका आश्चर्यकारी स्वरूप, उसकी प्रतीति हुई है, और आत्मामें तो शरीररोगसे बाधा न हो, ऐसी अव्याबाध स्थिरता रहती है।

उन्होंने पूर्णताकी प्राप्ति हेतु उग्र पुरुषार्थ उठाया था, फिर भी एक भव बाकी रहे, ऐसी स्थिति अंतमें रह गई। यही नियतिका अद्‌भुत आश्चर्य है। साथ ही साथ सम्यक् समाधानपूर्वक परिणमनमें अव्याबाध स्थिरता है।

शरीर प्रकृतिके उदय अनुसार असाताका वेदन होता है, तथापि उन्होंने शांतभावसे वेदन किया है। असाताका वेदन गौण रहा है। जिससे भावि असाताके बंधका निमित्त नहीं हुआ, परन्तु पूर्व असाताकर्मकी निर्जरा हुई है। जिसके कारण भविष्यमें अनंत–अनंत समाधिसुखकी, अनंत दर्शन और अनंत ज्ञान सहित, स्थितिको प्राप्त होंगे।

सत्पुरुषोंका सनातन सन्मार्ग जयवंत वर्तो !!

('धन्य आराधना'मेंसे साभार उद्धृत)

शूरवीर साधकोंको समाधिदिन पर शत् शत् प्रणाम!!!

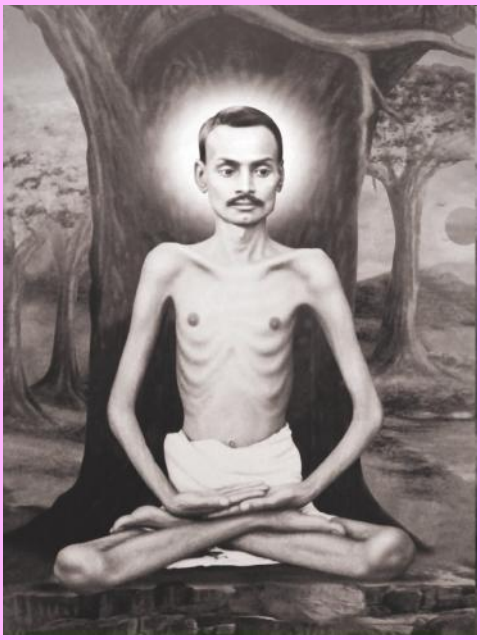

परम कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजी समाधिदिन
(चैत्र वदि पांचम–१८–०४–२०२५)

परम उपकारी पूज्य भाईश्री शशीभाई समाधिदिन
(चैत्र सुदी पांचम–०२–०४–२०२५)

... कुछएक ज्ञानी तो निर्विकल्प दशामें देहत्याग करते हैं। शरीर स्वास्थ्यकी गड़बडीका पता चल जाता है कि, अब देहत्यागकी क्षण नज़दीक है तो त्वरासे अपने ध्रुव आत्मामें इनका उपयोग सहज ही स्थिर हो जाता है। इतना पुरुषार्थ वेग पकड़ता है! सहज धारा तो चल ही रही होती है परन्तु पुरुषार्थमें तब ऐसी उग्रता आती है कि, एकतरफ देहत्यागकी घड़ी तो दूसरी ओर चैतन्यसूर्य भावसे भी भिन्न हो जाता है!! प्राण त्याग होनेका पता ही नहीं रहता कि, यह देह है कि छूट गया! निर्विकल्प उपयोगकी स्थितिमें देहत्याग हो जाता है, समाधि मरण पूर्वक देवलोकमें चले जाते हैं, वहाँ उत्पत्तिके साथ ही उन्हें अखण्ड जागृतिके कारण ख़याल आ जाता है कि मेरी मौजूदगीमें किंचित फ़र्क नहीं पड़ा। ज्ञानधारा कायम रहती है उन्हें भी समाधिमरण है और ज्ञानदशा सहित देहत्याग होते समय भी वे आत्मभान सहित होते हैं। शरीरका सम्बन्ध छूट गया परन्तु मेरी आत्मा अखण्डानंद है ज्ञानानंद अखण्डस्वरूप है। मेरे स्वरूपमें कोई हानि नहीं हुई। मैं हूँ, मैं मौजूद हूँ, मेरे अस्तित्वका मैं अनुभव कर रहा हूँ। जहाँ भी उत्पत्ति होती है वहाँ जागृतिका भाव अविरतरूपसे रहता है। समाधिमरण पूर्वक देहत्याग करनेवालेका नया जीवन समाधिमय होता है। वहाँ भी सम्यक्ज्ञानरूप समाधि उन्हें कायम रहती है। जो समाधिमय जीवन जीता है उनकी मृत्यु भी समाधिमय, जिनकी मृत्यु समाधिमय होती है उनका नया जीवन भी समाधिमय होता है। जिन्हें कोई आधि–व्याधि–उपाधि नहीं होती उसे कहते हैं समाधि।

(प्रवचनांश... 'बहिनश्री के वचनामृत' बोल – ३८, 'अध्यात्म सुधा' भाग – २, पन्ना–२७,२८)

REGISTERED NO. : BVHO - 253 / 2024-2026
RENEWED UPTO : 31/12/2026
R.N.I. NO. : 70640/97
Published : 10th of Every month at BHAV.
Posted at 10th of Every month at BHAV. RMS
Total Page : 20

'सत्पुरुषों का योगबल जगत का कल्याण करे'

श्री शशीप्रभु साधना स्मृति मंदिर
भावनगर

स्वत्वाधिकारी श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री राजेन्द्र जैन द्वारा अजय ऑफसेट, १२-सी, बंसीधर मिल कम्पाउन्ड, बारडोलपुरा, अहमदाबाद-३८० ००४ से मुद्रित एवम् ५८० जूनी माणिकवाडी, पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी मार्ग, भावनगर-३६४ ००१ से प्रकाशित
सम्पादक : श्री राजेन्द्र जैन -09825155066

If undelivered please return to ...
Shri Shashiprabhu Sadhana Smruti Mandir
1942/B, Shashiprabhu Marg, Rupani,
Bhavnagar - 364 001

Printed Edition : **3625**
Visit us at : http://www.satshrut.org

mayur process 9374825041